विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ८६ } वाराणसी, गुरुवार, ३० जुलाई, १९५९ { पचीस रुपया वार्षिक

स्वागत-प्रवचन

गुलमर्ग (कश्मीर) १५-७-'५९

मैं कश्मीर की खिदमत के लिए आया हूँ

एक साल से हम कश्मीर का जप कर रहे हैं। यद्यपि इस राज्य में हमने करीब दो महीने पहले ही प्रवेश किया, फिर भी अब तक हमारी यात्रा जम्मू-विभाग में ही हुई। जिसे 'कश्मीर-घाटी' कहते हैं, वह यहाँ से ही शुरू हो रही है। आप खयाल कर सकते हैं कि तेरह महीने से हम जिसका जप कर रहे थे, वहाँ पहुँचने पर आज हमें कितनी खुशी हो रही होगी।

कश्मीर से सारी दुनिया को रोशनी

आपने मेरा स्वागत करते हुए कहा था कि यहाँसे सारी दुनिया को रोशनी मिली है। यह सिर्फ लफ्जों की बात नहीं है। हमारे पुराणों में इसका जिक्र है। हमारे पुरखों ने माना है कि दुनिया का मरकज या मध्यबिंदु मेरु है। मेरु कहाँ है? आज पता चलता है कि मेरु याने कश्मीर है—काश-मेरु याने प्रकाश-मेरु, जहाँसे चारों ओर प्रकाश फैलता है। इसी 'काशमेरु' को बोलचाल की भाषा में 'कश्मीर' कहते हैं। देवता कहाँ रहते हैं, इसका जवाब पुराणों में दिया है कि वे मेरु के स्थान में रहते थे, याने आजकल की जबान में कश्मीर में रहते थे। इसमें कोई शक नहीं कि हमारे पुरखा बहुत पुराने जमाने से यहाँ रहते होंगे और यहाँसे चारों ओर फैले होंगे। लोकमान्य तिलक ने कहा था कि हमारे पुरखा उत्तरी ध्रुव पर रहते थे और वहाँसे आगे बढ़े। कुछ लोगों का खयाल है कि हमारे पुरखा 'एशिया माइनर' में रहते थे। लेकिन मेरा अपना खयाल है कि एक जमाने में कश्मीर सारी दुनिया का मरकज रहा होगा। यहाँसे चीन जा सकते हैं, हिंदुस्तान जा सकते हैं, पश्चिम एशिया भी जा सकते हैं। इस लिहाज से कश्मीर की तवारीख शायद दस हजार साल की होगी। बहुत पुराने जमाने से लोग यहाँ रहते थे। इसकी खुसूसियत यह थी कि यहाँ मुख्तलिफ जमातें रहती थीं। आज भी कश्मीर में जम्मू के इलाके में हिंदू ज्यादा हैं, लद्दाख के इलाके में बौद्ध ज्यादा तो कश्मीर-घाटी में मुसलमान ज्यादा हैं। इस तरह दुनिया के तीन बड़े मजहब यहाँ इकट्ठा हो जाते हैं, जो हमारे लिए बहुत खुशी की बात है।

मैं एकमात्र ईश्वर के इशारे पर

अब मैं कश्मीर-घाटी में आया हूँ, तो यहाँ क्या खिदमत कर सकूँगा, क्या मदद कर सकूँगा, यह नहीं जानता। यह केवल ईश्वर के इशारे पर चलता हूँ। नौ साल पहले उसीके इशारे से मेरे मन में घूमने की बात आयी थी और उसीके इशारे पर गत आठ सालों से घूम रहा हूँ। नहीं तो मेरे पास क्या है? मेरी अपनी कोई संस्था नहीं है, मेरी कोई पार्टी नहीं। मेरे कोई खास साथी नहीं है कि उनकी मदद से मैं इतना बड़ा काम उठाऊँ। पाँच करोड़ एकड़ जमीन हासिल करने का काम इन्सान सिर्फ अपनी ताकत से नहीं, बल्कि सबकी मदद से ही कर सकता है। किन्तु सबकी मदद कब मिलेगी? उसकी इब्तेदाह (आरंभ) तो यही है कि परमेश्वर ने कहा कि 'तू यह काम कर।' उसीके फज्ल (कृपा) से काम होगा। मैं मानता हूँ कि कश्मीर में वह मुझसे खूब काम लेगा, क्योंकि यह मेरी तमन्ना है।

अभी हम पीर-पंजाब लांघकर आये हैं। उसके उस पार मण्डी, लोरेन है। बारिश की वजह से हमें मण्डी में छह दिन रुकना पड़ा। वहाँ हमारे दिल में खयाल आया कि इसी तरह बारिश रही और हम पहाड़ लाँघ न सके तो उसे परमात्मा का इशारा समझकर कश्मीर न जायँगे, वापस पंजाब लौट जायँगे। हम तो उसीके इशारे पर चलते हैं। इसलिए हमने तय किया कि अगर हम पहाड़ के रास्ते कश्मीर न जा सके तो दूसरे तरीके से न जायँगे। लेकिन आखिर बारिश रुक गयी और हम पहाड़ लाँघकर यहाँ आ पहुँचे। जब हम पहाड़ पर थे, उन दिनों हमने एक तमाशा देखा। दो दिन आसमान बिलकुल साफ था। वह हमारी यात्रा को रोक सकता था, लेकिन उसने नहीं रोका और दो दिन एक भी बादल नहीं आया। कुछ थोड़ी तकलीफ तो उठानी ही पड़ती है, लेकिन तकलीफ के साथ-साथ खुशी भी होती है। कुरानशरीफ में कहा है कि जो तकलीफ उठाता है, उसीको कुछ खुशखबरी सुनने को मिलती है: 'बशशिरिस् साबिरीन।' हमें यहाँ आने का मौका मिला, यह परमात्मा के फज्ल से ही हुआ है।

लोरेन इबादतगाह बने

यह गुलमर्ग तो आरामगाह बन गया है। वैसे मेरे मन में आया कि उधर जो लोरेन गाँव है, वह इबादतगाह (पूजास्थान) बन सकता है। यहाँ गुलमर्ग में दुनियाभर के लोग आयेंगे, यहाँका नजारा देखेंगे, आराम पायँगे और खुश होकर जायँगे। लेकिन लोरेन ऐसी जगह बनायी जा सकती है कि जहाँ लोग इबादत के लिए, ध्यान के लिए जायँगे। ऐसे जो स्थान होते हैं, जहाँ इन्सान को इबादत की ख्वाहिश होती है, वहाँ दो चीजें होनी ही चाहिए। उनके बिना कोई भी भक्त, फकीर, योगी वहाँ नहीं आ सकते, ध्यान नहीं कर सकते। ऐसे स्थानों में गुर्बत (गरीबी) नहीं होनी चाहिए और ऐशोआराम भी न होना चाहिए। उधर लोरेन में खाली गुर्बत है और यहाँ ऐशोआराम है और उसके साथ-साथ गुर्बत भी है। वहाँसे वह गुर्बत हटनी चाहिए। उसके लिए वहाँ कुछ दस्तकारियाँ दी जायँ, कुछ मकान भी बनाये जायँ, आराम के नहीं, बल्कि सादे मकान। यह सब होगा तो लोरेन एक अच्छा स्थान बनेगा। तवारीख (इतिहास) में भी उसका नाम आता है। मुहम्मद गजनवी, जिसने सत्रह दफा हिन्दुस्तान पर हमला किया था, कश्मीर पर भी हमला करना चाहता था। वह लोरेन तक पहुँचा। लेकिन वहाँ उसे जो मुकाबला करना पड़ा और उसने सामने जो पहाड़ देखा, उसकी वजह से वह वापस लौट गया—यह भी तवारीख की याददाश्त है। इसलिए उसे विकसित किया जा सकता है।

हम कश्मीर की खिदमत में आये हैं और यह पहला दर्शन है। हम आपको भक्तिभाव से प्रणाम करते हैं: 'जय जगत्।'

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन

गुलमर्ग (कश्मीर) १६-७-'५९

हम दुनिया के बाशिंदे, कश्मीर या हिन्दुस्तान के ही नहीं

आप लोग जानते हैं कि मैं आठ साल से हिंदुस्तान की यात्रा कर रहा हूँ। मुख्तलिफ सूबों की यात्रा खत्म करने के बाद यहाँ पहुँचा हूँ। इसके आगे मालूम नहीं, कितने दिन यहाँ बीतेंगे। पैदल यात्रा चल रही है, क्योंकि गाँव-गाँव के लोगों के साथ मिलना चाहता हूँ। उनके हालात देखना चाहता हूँ। उनकी मुसीबतें क्या हैं, उन्हें कैसी सहूलियतें दी जा सकती हैं, कौन-सी मदद दी जा सकती है—यह सब देखना चाहता हूँ और कुछ सुझा सकूँ तो सुझाना भी चाहता हूँ।

जमीन का मालिक अल्लामियाँ ही

मैं खासकर एक काम लेकर घूम रहा हूँ। वह काम यह है कि जैसे अल्ला ने हवा, पानी, आसमान और सूरज पैदा किये हैं, वैसे ही जमीन भी उसीने पैदा की है और वह उसीकी देन है, नियामत है। वह हमारी पैदाइश नहीं है। बल्कि हम तो मिट्टी के पैदाइश हैं और मिट्टी में ही मिल जानेवाले हैं। हमारे एक संत ने लिखा है: "मिट्टी ओढ़ावन, मिट्टी बिठावन।" इसलिए हम जमीन के मालिक नहीं हो सकते। जब तक मालकियत का यह खयाल नहीं जायगा, समाज में कशमकश जारी ही रहेगी। जमीन से हमें उपज, फसल मिलती है। जमीन ही एक जरिया है, जिसके आश्रय से हम जिंदगी बसर कर सकते हैं। खुद रहने के लिए, मवेशियों के लिए, मर गये तो दफनाने के लिए—इस तरह जन्म से लेकर मरने तक हमें जमीन की जरूरत रहती ही है। फिर ऐसी हालत में, जब हिंदुस्तान में जमीन कम है, जमीन की मालकियत चंद लोगों के हाथ में रहने से किसीको भी लाभ नहीं है। इससे अमन भी न रहेगा। झगड़े, दंगा-फसाद चलते ही रहेंगे। अदालतों में भाई-भाई के झगड़े, बाप के खिलाफ बेटे के झगड़े चलते ही रहेंगे। इसलिए हमें एक बुनियादी चीज समझ लेनी चाहिए कि जमीन के मालिक अल्लामियाँ हैं, हम नहीं। इसमें मुझे शुबहा (शक) नहीं कि जमीन की मालकियत मानना कुफ्र है। वह अल्ला के साथ एक प्रकार की शिरकत हो जायगी।

जमीन की मालकियत मिटनी ही चाहिए

मैंने इस बारे में बहुत सोचा है और सोचता हूँ। आखिर इसी नतीजे पर आया हूँ कि जमीन की मालकियत खत्म होनी ही चाहिए। अभी आपने देखा, यह बाढ़ आयी और उसने सारा चौपट कर दिया—तबाह कर दिया। अगर आप अनफरदा (व्यक्तिगत) मालकियत कायम रखेंगे तो फिर बसाने का काम मुश्किल हो जायगा, नामुमकीन हो जायगा। फिर जिनको मदद की सख्त जरूरत है, उन्हें आज वह नहीं पहुँच पाती। यह सब तब तक चलता रहेगा, जब तक अनफरदा मालकियत रहेगी। हमने यह विचार सारी दुनिया को समझाने का इरादा कर लिया है।

यह अल्ला का काम

वैसे तो इस काम में परमेश्वर का हाथ था। वह किस्सा आप सब जानते ही हैं। शुरू में ही परमेश्वर का इशारा हुआ और मैं निकल पड़ा। मुझे ऐसी आदत नहीं है कि इस तरह की बेकार तकरीरें किया करूँ, जिनसे कोई काम न निकले। कोई काम हाथ में लिये बगैर ऐसे अच्छे विचार यों ही समझाने का भी एक प्रकार है और वह काम कई संतों और नबियों ने किया है। फिर जिन्हें वह जितना जँचा, उतना उन्होंने लिया। कोई किसी प्रकार की जबरदस्ती नहीं। मेरे विचार में भी कोई जबरदस्ती नहीं है। अगर सभी मेरा विचार मानने लगें तो मैं घबड़ा जाऊँगा। आज कुछ लोग मेरा विचार मानते हैं और कुछ नहीं मानते तो मुझे खुशी होती है। अगर सब लोग मेरा विचार मानते, कबूल करते तो मैं घबड़ा जाता। मैं जबरदस्ती करना नहीं चाहता। मेरे हाथ में कोई सल्तनत नहीं है, न मेरा सल्तनत पर विश्वास है। मेरा किसी इरादे से सम्बन्ध नहीं है। मैं दुनिया का दोस्त और अल्ला का बंदा होने का दावा करता हूँ। मैं भी एक विचार समझाना चाहता हूँ, लेकिन बिना काम का नहीं। बिना काम के खास विचार समझाना मेरी कूबत नहीं है या यह समझना चाहिए कि मेरे लिए ऐसी हालत नहीं है। मैंने कहा है कि मैं परमेश्वर के इशारे पर चलता हूँ, मैं अपने विचार से नहीं चलता। उसका इशारा हुआ तो वह मैं टाल भी न सका। इसीलिए मैं कहता हूँ कि यह अल्ला का काम है। नहीं तो यह मेरे कूबत के बाहर की बात है कि सारे बेजमीनों को मैं जमीन दिलाऊँ।

मेरी किसी तरह की जिद नहीं

आजतक मुझे ४० लाख एकड़ जमीन मिली है और ५ हजार ग्राम-दान मिले हैं। उसे भी गिना जाय तो ५० लाख एकड़ होगी। पर जब ५ करोड़ एकड़ जमीन मिलेगी तभी बेजमीनों को हम जमीन दे सकेंगे। आठ साल में ४० लाख एकड़ जमीन मिली है तो ५ करोड़ एकड़ के लिए कितने साल लगेंगे, इस तरह हिसाब-कर मैं काम करूँ तो निश्चय ही यह मेरी कूबत के बाहर का काम है। इसलिए मैंने कहा है कि ईश्वर के इशारे पर मैं काम कर रहा हूँ और बेफिक्र होकर घूम रहा हूँ। मैं हारा तो भी मैं समझूँगा कि मैं जीता। अगर जीता तो जीता ही समझा जाऊँगा। अगर वह चाहता है कि मेरे जरिये यह काम पूरा हो तो अच्छा ही है। अगर वह चाहता है कि मेरे जरिये यह काम पूरा न हो, दूसरे के जरिये पूरा हो तो भी अच्छा ही है। अगर वह चाहता है कि यह काम न मेरे जरिये पूरा हो, न दूसरे जरिये पूरा हो, यह काम अधूरा ही रहे तो भी अच्छा ही है। मैं तो इस खयाल से काम करता हूँ कि इसका नतीजा उसके जिम्मे है, उसकी मर्जी पर है। वह चाहे सो नतीजा लाये। मेरा कोई हठ या जिद नहीं है।

लोरेन की बदसूरती शोचनीय

लेकिन यह मेरी जिद न होने पर भी गरीबों की जिद अवश्य है। उनका यह हठ है। अभी मैं लोरेन से आया हूँ। उधर पहाड़ पर बहुत खूबसूरती देखी। इस प्रदेश में कुदरत ही खूबसूरत है। जैसे फतिंगे दिये पर, शमा पर टूट पड़ते हैं, वैसे ही यहाँ दर्शक भी टूट पड़ते हैं। लेकिन वहाँ इतनी खूबसूरती देखने पर भी हमें कोई खुशी नहीं हुई। बल्कि दिल में दर्द ही हुआ, दुःख ही हुआ। बड़ी गुर्बत (गरीबी) है वहाँ। जितनी खूबसूरत कुदरत वहाँ हमने देखी, उतना ही बदसूरत इन्सान वहाँ देखा। इन्सान की हालत जितनी बुरी हो सकती है, उतनी वहाँ है। ऐसी हालत में वह खूबसूरती देख हमें खुशी नहीं हो सकती। हम मौज करें और प्यारे भाइयों को खाना-कपड़ा भी न मिले। बारिश और ठंड में भी उन्हें ऐसा ही ठिठुरना पड़े तथा यह सारा होने पर भी हम मौज से खायें—पीयें—यह मेरी अक्ल के बाहर की बात है। मैं यहाँ चारों ओर बहुत दुःख देख रहा हूँ।

अब तो जागो और भेद मिटा दो !

अब तो बाढ़ आयी है। हमारे एक भाई ने कहा कि यह "तूफाने नूह" है। मेरा भी यही यकीन है। कहा जा सकता है कि यह यकीन अवैज्ञानिक है। इस यकीन के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया जा सकता। लेकिन यह 'तूफाने नूह' है – यह बात लोगों ने कही और मैंने भी मानी। याने जब हमार हाथों से बुरे काम होते हैं तब कुदरत का, प्रकृति का कोप इसी तरह होता है। हमें मिल-जुलकर सोचना चाहिए कि यह हम सबका मिला-जुला पाप है। यह कौन-सा पाप है, कौन-सी बुराई है, यह देखें तो यही मालूम पड़ेगा कि हम अपने गरीब भाइयों की परवाह नहीं करते और हम संगदिल और तंगदिल बने हैं। इसीलिए ये मुसीबतें आती हैं। परमेश्वर कहता है—अब तो जागो। ऐसी हालत में ये तरह-तरह के फिरके, फर्क भूल जाओ। यह अमीर है, यह गरीब है, यह मालिक है, यह मजदूर है—ये सारे दर्जे मिटा दो। यह ऊँचा, यह नीचा ये भेद मिटा दो !

विविधता में एकता : भारत की शान

कल मैं जंगल के रास्ते से आ रहा था। उस जंगल में मुख्तलिफ (अलग-अलग) किस्म के दरख्त थे। हमारे साथ रेंजर थे। उन्होंने कहा कि "जिस जंगल में एक ही किस्म के पेड़ होते हैं, वह जंगल बढ़ता नहीं है और जिस जंगल में मुख्तलिफ किस्म के दरख्त होते हैं, वह जंगल तरक्की करता है।" मुझे एकदम सूझा और मैंने कहा : भारत ऐसी ही हालत में है। भारत में भी मुख्तलिफ जमातें रहती हैं। वेद के जमाने से आजतक यहाँ के लोगों को एक तजुरबा है। सिलसिलेवार खेती, तहजीब मिली है और एक सभ्यता बनी हुई है। जोरदार और शानदार ऐसी १४ जबानें हैं, जो यहाँ फली हैं, फूली हैं। ऐसा कौन-सा देश है, जो ऐसी शान दिखा सकता है ? चीन एक बहुत बड़ा

समुदाय : धर्म का आधार

वेद में ऋषि प्रार्थना करता है : "अस्मिन् ग्रामे विश्वं पुष्टम्" इस ग्राम में सब पुष्ट रहे। 'मेरे' घर में पुष्ट रहे, 'मुझे' पुष्टि रहे—ऐसा वह नहीं कहता। वह सामूहिक भावना से ही सोचता है। गायत्री मंत्र का एकांत में जप किया जाता है। उसमें भगवान से प्रार्थना है। किन्तु "हे भगवान् ! मुझे बुद्धि दे," ऐसा नहीं कहा है। "धियो यो नः प्रचोदयात्"–हमें बुद्धि दे, हमें प्रेरणा दे, ऐसा ही कहा है। इस तरह स्पष्ट है कि भारतीय साधक एकांत में ध्यान करता है, पर प्रार्थना सब के लिए करता है। अतः समूह-भावना ही धर्म है।

धर्म वही है, जो सबको धारण करता है। अलग-अलग रहने पर धर्म नहीं बनता। सब एक हो जाते हैं, तभी धर्म बनता है। तभी धर्म की जरूरत भी है। क्रोध नहीं आना चाहिए, यह धर्म है। परंतु वह कैसे पहचाना जाय ? गुस्सा करना हो तो भी दूसरा मनुष्य सामने चाहिए। इसी तरह परीक्षा के लिए भी समाज चाहिए। सहकार धर्म है, पर अकेले रहने पर क्या सहकार होगा ? समाज होगा, तभी तो सहकार होगा और धर्म पहचाना जायगा ! सत्य और प्रेम धर्म है। पर अकेले रहें तो प्रेम किस पर किया जायगा ? प्रेम-धर्म तभी प्राप्त होगा, जब समाज में हम रहेंगे।

इस तरह देखा जाय तो ध्यान में आयेगा कि मानव के जितने धर्म हैं, सब समुदाय में ही हैं। लेकिन आज समुदाय बनता ही नहीं ! हाँ, परिवार अवश्य बनता है। अगर इतना भी नहीं बनता तो हम जंगल के जानवर के समान हो जाते ! परिवार में भी कुछ धर्म है, परंतु वह छोटा है। लेकिन परिवार में कितनी धर्म-परीक्षा होगी ? परिवार जितना व्यापक होगा, उतनी ही धर्म-परीक्षा ज्यादा अच्छी होगी। ♦♦♦

देश है, पर वहाँ एक ही जबान है। दूसरी जबानें हैं, लेकिन उनमें साहित्य नहीं है। रूस भी बड़ा देश है, लेकिन वहाँ भी एक ही ऐसी जबान है। बाकी सारी बोलियाँ हैं, पर उनमें साहित्य नहीं है। यूरोप में ऐसी मुख्तलिफ जबानें हैं, जिनमें साहित्य बहुत है। लेकिन यूरोप एक देश नहीं है। उसके छोटे-छोटे टुकड़े बने हैं।

आज का यूरोप

मैं कभी-कभी मजाक में कहता हूँ कि अगर यूरोप का नक्शा देखना है तो एक काँच जमीन पर डाल दो। उसके अलग-अलग टुकड़े जमीन पर गिरेंगे। वैसा ही यूरोप है, यह समझ लो। वह सारा टूटा हुआ है, फूटा हुआ है। वहाँ जबान के मुताबिक छोटे-छोटे देश हैं। फ्रांस और जर्मनी ही लीजिये। दोनों के बीच पहाड़ भी नहीं है। दोनों की जबानें अलग-अलग हैं, लेकिन लिपि एक ही है। मैं दोनों जबानें जानता हूँ। जर्मन तो मैंने १८ दिन में सीख ली—इसी यात्रा के दरमियान। यह नहीं कि रोज चार-छह घंटे मश्क (अध्ययन) किया। जब मैंने जर्मन भाषा इतनी जल्दी सीख ली तो कोई भी फ्रेंचमैन तो उसे आठ दिनों में सीख सकता है। ये इतनी नजदीक जबानें हैं। फिर भी दोनों देशों के बीच कोई पहाड़ नहीं है, इसका उन्हें रंज है। मानो इसीलिए उन्होंने 'मेजिनो' और 'सिगफ्रिड' ऐसी दो लाइनें (रक्षापंक्तियाँ) मान ली हैं। उन दोनों के बीच लड़ाइयाँ होती हैं तो वह आपस की लड़ाई, गृहयुद्ध नहीं माना जाता, राष्ट्रीय युद्ध माना जाता है। लेकिन हिंदुस्तान में मराठा और राजपूतों में जब लड़ाइयाँ होती थीं तो अंग्रेज इतिहासकार ने लिखा है कि हिन्दुस्तान में गृहयुद्ध हुआ। यह हमारे लिए बड़े गौरव की, बड़े फक्र की बात है, गुरूर की बात है। क्यों? इसलिए कि ये सब सूबे मिलकर एक देश होता है।

हिन्दुस्तान राजनीति में अगुवा

सारांश यूरोप में बेलजियम, नॉर्वे, हॉलैंड, स्विट्जरलैण्ड ये सारे छोटे-छोटे देश हैं, क्योंकि इनकी जबानें अलग-अलग हैं। यह बात ठीक है कि उनकी काफी अच्छी जबानें हैं। उनमें अदब है, साहित्य है। पर परमात्मा करे, यूरोप का संघ जल्दी बने। ऐसा परमेश्वर करेगा तो हम भी बरी हो जायँगे। कारण उन्हींके कारण सारे झगड़े पैदा हो रहे हैं—सभ्यता में और राजनीति में। इसलिए यूरोप का संघ बनेगा तो वह हिंदुस्तान की हालत में आयेगा। मैं आपका ध्यान इस तरफ खींचना चाहता हूँ और कहना चाहता हूँ कि हिंदुस्तान राजनीति में अगुवा है, पिछड़ा नहीं है। हमारे पुरखों ने हमें सिखाया है कि प्यार से रहना चाहिए। यहाँ कभी मुश्किलात नहीं आती हैं, ऐसा नहीं है। जिस देश में मुसीबतें, झगड़े नहीं हैं, वह देश कम-नसीब है। वहाँ छोटी जमात है। हमारी बड़ी जमात है और मुख्तलिफ जमातें हैं। जंगलात विभाग के अधिकारी के कल के कहने से हमें बड़ी अच्छी नसीहत मिली है। मैंने उनसे कहा कि हिंदुस्तान की भी तरक्की हो सकती है। यह अक्ल की बात है। जहाँ झगड़े होते हैं वहाँ हम गिरते भी हैं। इसलिए सबकी सिफत का फायदा मिले, ऐसी तरकीब करनी होगी। यही हमें करना है, यही कहते हुए मैं घूम रहा हूँ।

मुझसे जितना लाभ उठा सकें, उठा लें

अब मैंने कश्मीर में कदम रखा है। चाहता हूँ कि हम सब एक हों। कश्मीरवाले यह न समझें कि हम कश्मीर के बाशिंदे हैं या हिंदुस्तान के बाशिंदे हैं। बल्कि हम यह समझें कि हम दुनिया के बाशिंदे हैं। इसीलिए हम 'जय जगत्' कहते हैं। मेरी तमन्ना है कि मेरे हाथ से कश्मीर की खिदमत हो। मैं यहाँ अच्छा खादिम बनकर आया हूँ, खिदमत में मुरब्बी बना हूँ। उसका मश्क मुझे हुआ है। आठ साल हिंदुस्तान घूमकर मैं यहाँ आया हूँ, तो मुझे कुछ फन हासिल हुआ है। इसलिए मैं कुछ खिदमत कर सकता हूँ। मैं बचपन से ही अपने दोस्तों से कहा करता हूँ कि मैं तो 'डिक्शनरी' (कोश) हूँ, 'लुगान' हूँ। आपको जरूरत हो तो 'रिफरेन्स' के लिए आप 'डिक्शनरी' खोल सकते हैं। मैं आपकी मदद में आया हूँ। आप मेरा जितना फायदा ले सकते हैं, उतना ले लें। ◆◆◆

अनुक्रम

१. कश्मीर की खिदमत के लिए आया हूँ
गुलमर्ग १५ जुलाई '५९ पृष्ठ ५६५
२. हम दुनिया के बाशिन्दे, कश्मीर या हिन्दुस्तान के ही नहीं
गुलमर्ग १६ जुलाई '५९ " ५६६

ये पाँचसाला मंसूबे!

कहा जाता है कि उपज बढ़ाना ही मुल्क का बड़ा मकसद है। लेकिन उपज बढ़ाना तो पहली मंजिल है। हमारा आखिरी मकसद तो यही है कि हम सब एक हों, एक-दूसरे के सुख से सुखी और दुःख से दुःखी हों, एक-दूसरे के लिए मर मिटने को राजी हों। समाज में किसी किस्म की मुखालिफत न हो, बल्कि प्यार हो। ऐसा ही समाज हमें बनाना है। यह सब पाँचसाला मंसूबे से नहीं होगा। 'मंसूबा' शब्द बड़ा ही अच्छा है। 'मन की मन ही माहि रही। ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही।' हमने सोचा था कि तीरथ जायँगे, हरि-भजन करेंगे, लेकिन बुढ़ापा आया तो सोचा कि कहाँ रामेश्वर जायँ और कहाँ काशी जायँ, यहीं रहें तो ठीक है। इस तरह 'मन की मन ही माहि रही'। फिर मौत का फरिश्ता आयेगा तो चोटी पकड़ लेगा। मुसलमान चोटी नहीं रखते, पर दाढ़ी तो रखते ही हैं, तो उनकी दाढ़ी ही पकड़ेगा। कुछ भी न हो तो कान ही पकड़ेगा! फिर तो 'मन की मनही माहि रही।' इसीका नाम है मंसूबा! इधर पाँचसाला मंसूबे भी बढ़ रहे हैं, पैसा भी खूब खर्च हो रहा है और उधर बेकारी भी बढ़ रही है। अजीब बात है कि रोशनी भी बढ़ती है और अंधेरा भी। इसलिए इन मंसूबों से काम न चलेगा। बल्कि हमें खुद नेक बनना होगा और अपने मसले खुद हल करने होंगे। ◆◆◆

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, म० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी